संपादकीय

प्रिय पाठकों, इस अंक में हमने आपके लिए सबसे पहले शामिल किया है 'नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009'। वास्तव में हम सब जो किसी-न-किसी तरह से शिक्षा के विभिन्न पहलुओं से जुड़े हुए हैं उनके लिए यह आवश्यक है कि इस अधिनियम के प्रावधानों को जानें और उनकी बारीकियों को समझने का प्रयास करें। जब हम इन प्रावधानों को जानेंगे तभी तो इसकी जानकारी उनके अभिभावकों तक पहुँचा पाएँगे जिनके लिए यह अधिनियम लाया गया है, यानि कि छ: से 14 वर्ष तक के वे बच्चे जो विद्यालय में नामांकित नहीं हैं। यही नहीं, हम शिक्षा व्यवस्था में विभिन्न स्तरों पर बैठे ज़िम्मेदार अधिकारियों और कर्मचारियों को भी सही जानकारी सही ढंग से दे पाएँगे। यह अधिनियम यदि बच्चों को शिक्षा का अधिकार देता है तो साथ ही हमें शिक्षा संबंधी हमारे कर्त्तव्यों का भान भी कराता है। क्या नीचे लिखे सच से हम सबका सामना नहीं होता?

चौराहे पर मेरी अँगुली पकड़कर भीख माँगता वह बच्चा स्कूल जाने की उम्र का था।

'क्यों नहीं स्कूल जाते?'

यह पूछने पर अपनी माँ की ओर इशारा करता है। माँ आह भरती हुई कहती है–

'गरीब हैं हम, फीस और कपड़े नहीं दे सकते'। यदि तुम्हें कुछ खर्च न करना पड़े तो,

'तो भी नहीं, फारम भी भरना नहीं आता,'

इसमें भी दिक्कतें न हों तो?

'तो... कौन माँ नहीं चाहेगी?'

कक्षा में बैठे अपने बच्चे को देख उसकी माँ ने मेरा हाथ पकड़ा और कहा,

'आज मेरा सपना पूरा हुआ'

एक मीठा सच मेरे सामने था। शिक्षा – किसी का अधिकार, किसी का सपना और किसी के लिए कर्त्तव्य। इस अंक में अन्य लेखों के रूप में शामिल हैं शिक्षा से जुड़े विविध मुद्दे। शरद सिन्हा और जितेंद्र कुमार लोढ़ा अपने लेख के माध्यम से आर्थिक सबलीकरण के स्त्री विमर्श में शिक्षा की भूमिका एवं उत्तरदायित्व को रेखांकित करते हैं। इस अंक में शामिल तीन लेख जो शोध अध्ययनों पर आधारित हैं, भारतीय स्कूली शिक्षा की विशेषताओं और चुनौतियों को सामने रखते हैं। सुषमा पाण्डेय का लेख प्राथमिक शिक्षा में विकेंद्रीकृत प्रशासन व्यवस्था की प्रभावशीलता से जुड़े कुछ परिणामों को सामने रखता है तो शारदा कुमारी का अध्ययन भिन्न रूप से सक्षम बच्चों के विशेष विद्यालय से नियमित विद्यालयों में परागमन (ट्रांज़िशन) जैसे पहलू को प्रकाश में लाता है। मृदुला भदौरिया और रश्मि गोरे द्वारा संयुक्त रूप से किया गया अध्ययन भारतवर्ष में साक्षरता के विभिन्न पहलुओं की जानकारी देता है। एक ओर भारतीय शैक्षिक शोध अध्ययन

यथार्थ दर्शाते हैं और दूसरी ओर पॉल स्मेयर्स का लेख 'व्यर्थ शोध, निरर्थक सिद्धांत और जोखिम में शिक्षा' शिक्षा और शोध जगत का एक दूसरा ही पहलू सामने रखता है जिसमें शोध धारणाओं के दोषपूर्ण होने की बात कही गई है और बताया गया है कि शैक्षणिक शोध के क्षेत्र में बहुत कुछ करना बाकी है।

इस अंक में शामिल राजेश कुमार निमेश, शशि मित्तल, संजीव शुक्ला, सुनीता कुमारी नागर तथा हंसराज पाल और मंजुलता शर्मा के लेख कई अन्य सरोकारों जैसे 'रेखाचित्रों की बदलती भूमिका'; 'मूल्यांकन के नए मानदण्ड'; 'वर्तमान संदर्भ में संस्कृत भाषा की उपादेयता' तथा 'विद्यार्थियों की शाब्दिक सृजनात्मकता का विकास' को स्पर्श करते हैं और नए आयाम सामने रखते हैं।

हमें आशा है कि मिश्रित रंगों से सराबोर यह अंक भी आपको पसंद आएगा।

अकादमिक संपादकीय समिति